रश्मि', 'चाँदनी', 'नौका विहार' और 'हिमाद्री' जैसी कविताओं में देखी जा सकती है. 'चाँदनी' कविता तो भाषा के लाक्षणिक वैभव का सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करती है. 'हिमाद्री' कविता में भी कवि हिमालय के सौन्दर्य और विराट रूप को प्रस्तुत करता चला गया है. 'आँसू' की 'बालिका' भी इसका आकर्षक उदाहरण है.

भाषा की प्रसंगानुकूलता–पंतजी की काव्य-भाषा की एक विशेषता यह भी है कि उसमें प्रसंगानुकूल कोमलता, ओजस्विता, दार्शनिकता और आध्यात्मिक अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने की भरपूर क्षमता विद्यमान है. नौका-विहार में भाषा का कोमल स्वरूप तो देखा ही जा सकता है, उसकी मसृणता को भी अवलोकित किया जा सकता है. उदाहरण के लिए निम्नांकित पंक्तियाँ देखिए जिनमें भाषा का ऐसा मोहक रूप प्रस्तुत किया गया है कि शब्दों के उच्चारण मात्र से ही कथ्य पाठक की चेतना में प्रविष्ट हो जाता है–

"सामने शुक्र की छवि झलमल,
पैरती परी-सी जल में कल, रूपहरे कचों में हो ओझल।
लहरों के घूँघट से झुक-झुक,
दशमी का शशि निज तिर्यक मुख, दिखलाता मुग्धा-सा रुक रुक।"

भाषा की दुरूहता और जटिलता–पंत की काव्य-कथा में एक दोष भी है और वह है दुरूहता अथवा अनावश्यक रूप से आई अथवा लायी गई जटिलता. जहाँ कहीं पंत की भाषा में दुरूहता आ गयी है, वहीं समूचे पद का भाव चरमरा गया है. पंत-काव्य में काफी शब्द ऐसे प्रयुक्त हुए हैं, जिनका कोई अर्थ नहीं है. केवल डिक्शनरी से उतार दिए गए हैं, जो पद को निरर्थक सिद्ध करने में सहायक हो गए हैं. अनिलातप, वाष्पाच्छादित तिमिरांकित, गन्धोद्दाम, फेनस्फार, समुच्छ्वसित, महदाकांक्षा, प्रतिच्छवित, फेनोच्छ्वसित, स्थविरता आदि शब्द पंत को 'डिक्शनरी का कवि' घोषित करते हैं. यही नहीं, इस प्रकार के तमाम शब्द प्रयुक्त हुए हैं, जो भावों की सरिता को रोककर उसके वास्तविक प्रवाह को समाप्त कर देते हैं. इन शब्दों के प्रयोग से तो समस्त पद ही निरर्थक सिद्ध हो गए हैं.

अलंकार-योजना–भाषा के अतिरिक्त शिल्प के क्षेत्र में दूसरा स्थान अलंकारों का है. अलंकार कविता कामिनी को सजाने और सँवारने का काम करते हैं. यह ठीक है कि अलंकार का काम अलंकरण है, परन्तु यह ऐसा अलंकरण नहीं होना चाहिए, जो भाषा की चमत्कृति के साथ भावों को दबा दे. कहीं ऐसा न हो कि अलंकरण भावों की क्रान्ति को फीका कर दें. पंत ने एक कुशल शिल्पी होने के नाते अलंकारों का सदुपयोग ही किया है. वे अलंकार को काव्य का प्राणतत्त्व नहीं मानते हैं, वरन् शोभा-वृद्धि के एक उपकरण के रूप में स्वीकारते हैं. उनकी अलंकार विषयक मान्यता इस प्रकार है–"अलंकार केवल प्राणी की सजावट के लिए नहीं हैं, वरन् भावाभिव्यक्ति के भी विशेष द्वार हैं. भाषा की पुष्टि के लिए, राग की पूर्णता के लिए भी आवश्यक उपादान हैं, वे वाणी के आचार-विचार, व्यवहार, रीति-नीति हैं, पृथक् स्थितियों के पृथक् स्वरूप भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के भिन्न-भिन्न चित्र हैं. वे वाणी के हास, अश्रु, स्वप्न-पुलक और हाव-भाव हैं."

रीतिकालीन उस अलंकरण की प्रवृत्ति के प्रति कवि ने सहानुभूति नहीं दिखलाई है, जिसके आधार पर कवि की पंक्ति-पंक्ति में अलंकार जबरदस्ती ठूँस-ठूँसकर भरे गए हैं और इस प्रकार कविता के स्वरूप को बिगाड़ा गया है. वस्तुतः वे अलंकार कविता में ऊपर से जोड़ी गयी थिगलियों की भाँति खड़े अभद्र प्रतीत होते हैं, जबकि पंत के अलंकार भाषा के सहज धर्म और स्वाभाविक स्वरूप की रक्षा करते हैं. कवि की पंक्ति "वाणी मेरी क्या तुम्हें चाहिए अलंकार" उसी भाव की द्योतक है, जिसमें अलंकार साध्य न होकर साधन है. धर्म न होकर आपद्धर्म हैं. रीतिकालीन अलंकरण की प्रवृत्ति के प्रति कवि की आक्रोश भरी पंक्तियाँ ये हैं– "रीतिकाल में भाषा की जाली जब केवल अलंकारों के चौखटे में फिट करने के लिए ही बुनी जाने लगी और भावों की उदारता, शब्दों की कृपण जड़ता में बँधकर सेनापति के दाता 'सूम' की तरह एक सार हो गयी तो आधुनिक युग अलंकारों के प्रति एक विद्रोह लेकर खड़ा हुआ, परन्तु काव्य-देश से उसका सर्वथा निष्कासन तो असम्भव था, हाँ उसकी पोजीशन कुछ घटा दी गयी उनको कुछ विदेशी शिक्षा-दीक्षा देकर सुसंस्कृत करने का सफल प्रयत्न किया गया." स्पष्टीकरण के लिए कवि द्वारा प्रयुक्त उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, सांगरूपक, दृष्टान्त, उल्लेख, मानवीकरण और विशेषण विपर्यय के कुछ उदाहरण देखिए–

उपमा–

1. "साड़ी की सिकुड़न-सी जिस पर,
   शशि की रेशमी विभा से भर"
2. "मृदु मन्द-मन्द मंथर-मंथर,
   लघु तरणि हंसिनी-सी सुन्दर"
3. "सामने शुक्र की छवि झलमल,
   पैरती परी-सी जल में कल"
4. "अति दूर, क्षितिज पर, विटपमाल
   लगती भ्रू-रेखा-सी अराल"
5. "माँ के उर पर शिशु-सा समीप,
   सोया धारा में एक द्वीप"
6. "इस धारा-सा ही जग का क्रम,
   शाश्वत इस जीवन का उद्गम"

Scanned with CamScanner

उल्लेख–

"बिन्दु में थी तुम सिन्धु अनन्त
एक स्वर में समस्त संगीत
एक कलिका में अखिल वसन्त
धरा पर थी तुम स्वर्ग पुनीत"

दृष्टान्त–

"सुख-दुःख के मधुर मिलन से
यह जीवन हो परिपूरण,
फिर घन में ओझल हो शशि
फिर शशि से ओझल हो घन"

सन्देह–

"निद्रा के उस अलसित वन में
वह क्या भावी की छाया ?
दृग पलकों में विचर रही
या वन्य -देवियों की माया ?"

मानवीकरण–

"नीले नभ के शतदल पर
वह बैठी शरदहासिनी !
मृदु करतल पर शशि मुखधर
नीरव अनिमिष-एकाकिनी ।"

बिम्ब-विधान–बिम्ब कविता का महत्वपूर्ण उपादान है. बिम्ब को मात्र चित्र नहीं समझना चाहिए. यदि बिम्ब का चित्र से कोई सम्बन्ध है, तो वह तभी सम्भव है, जबकि उसमें कवि की संवेदना आकर मिल जाए. पंत के काव्य में बिम्बों की कमी नहीं है. जिस कवि ने चित्र-भाषा और मानवीकरण के प्रयोग पर विशेष बल दिया हो, उसका काव्य बिम्ब-विधान की दृष्टि से निश्चित रूप से श्रेष्ठ सिद्ध होता

Scanned with CamScanner

भाव बिम्ब–

"माँ के उर पर शिशु-सा समीप,
सोया धारा में एक द्वीप
उर्मिल प्रवाह को कर प्रतीप।"

निष्कर्ष–उपर्युक्त विवेचनोपरान्त कहा जा सकता है कि पंत का काव्य अभिव्यंजना-शिल्प की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है. उसमें भाषा का वैभव है, अलंकारों की छटा है, बिम्बों का मनोहरी सौन्दर्य है और इन सबसे मिलकर बना हुआ है एक कलात्मक और दिव्य आभा-पूरित विशिष्ट एवं उल्लेखनीय कला सन्दर्भ है. ऐसी स्थिति में यही कह सकते हैं कि पंत का काव्य अनुभूति के धरातल पर जितना प्रभावित करता है, उतना ही अभिव्यक्ति के धरातल पर भी हमारे मन-प्राण को बाँध लेता है. इसका कारण पंत की प्रतिभा, उनकी सजग चेतना और सन्दर्भ-सापेक्ष अनुभूति व सफल अभिव्यक्ति का प्रस्तुतीकरण है.

Scanned with CamScanner